स्त्री नैतिकता का तालिबानीकरण

सम्पादक

रमणिका गुप्ता • विमल थोरात

सह–सम्पादक

अनिता भारती • प्रोमिला

दलित स्त्रियों के सामाजिक शोषण का कोई अन्त नहीं है। वे जाति के नाम पर, महिला के नाम पर, मजदूरी के नाम पर, सुन्दरता के नाम पर कभी भी अपमानित और बलात्कृत हो सकती हैं। सरकारी आंकड़े बताते हैं सामाजिक शोषण और अत्याचार में दिनोंदिन बढ़ोत्तरी हो रही है। ऊंची जाति की नफरत, हिंसा, उत्पीड़न, अत्याचार और क्रूरता की शिकार दलित स्त्रियाँ ही सर्वाधिक हैं।

दलित स्त्रियाँ घर में भी अत्याचार और अपमान का दंश सहती हैं। अम्बेडकरवादी विचारधारा से जुड़े चेतनाशील परिवारों में भी उनको मात्र प्रदर्शन की वस्तु बना कर रखा गया है। दलित समाज के क्रियाकलापों में उनको लाया, ले जाया नहीं जाता।

नैतिकता की बोरी में ठूंस-ठूंसकर दबा-दबाकर भरी जा रही है दलित महिलाओं की अस्मिता। बोरी से सिर तानकर निकालती महिला को पुरुषों द्वारा नैतिकता के कोड़े मार-मारकर जानवरों की तरह संस्कारों और मर्यादा के बाड़े में ठूंस दिया जाता है।

आखिर इस नैतिकता की परिधि क्या है? नैतिकता के बंधन का तालिबानी फतवा सिर्फ औरतों के लिए ही क्यों? नैतिकता सिर्फ विवाह और सैक्स के लिए ही क्यों? दिन-रात खटती स्त्री के श्रम के लिए नैतिकता क्यों नहीं? बच्चों के पालने-पोसने में नैतिकता कहाँ कुएँ में पानी भरने चली जाती है? पुरुषों द्वारा तैयार की गई नैतिकता पर मात्र स्त्रियों के लिए बंधना, मर्यादा, बस इसलिए कि पुरुषों को 'जूठन' पसंद नहीं, फिर पुरुष चाहे जहाँ मुंह मारे पर सारे बंधन सिर्फ दलित स्त्री के लिए। नैतिकता के तालिबानीकरण का फरमान पुरुषों के लिए क्यों नहीं? हालांकि मैं किसी के लिए भी लगाए जाने वाले फरमान व फतवे के खिलाफ

(दूसरे फ्लैप पर जारी...)

स्त्री नैतिकता का तालिबानीकरण

अनुक्रम

संपादकीय : खरी-खरी बात

रमणिका गुप्ता : नंगा हो मत नाच! 7
विमल थोरात : 'मनुस्मृति' का तालिबानी विस्तार 19
अनिता भारती : अन्याय के खिलाफ लड़ना ही नैतिकता है 28
प्रोमिला : बड़ी लकीर खींचना सीखिए 34

आधी दुनिया का जवाब

सुशीला टाकभौरे : स्त्री विरोधी पुरुषों की विकृत मानसिकता का खण्डन 37
करुणा : विवाह, सन्तान और उत्तरदायित्व 50
डॉ. कुसुम मेघवाल : बुद्धिहीनता और कृतघ्नता का परिचायक 59
उपासना गौतम : दलित स्त्रियों पर ही व्यभिचार का आरोप क्यों? 64
अनामिका : साहित्य का मातृ-शिशु कल्याण विभाग 66
पुष्पा विवेक : दलित स्त्रियां सबक सिखाने का हौसला रखती हैं 70
वन्दना मिश्र : मर्यादा और अपमान का युद्धक्षेत्र स्त्री-देह ही क्यों? 73

चिन्तक का यथार्थ

प्रो. तुलसीराम : दलित समाज के नए 'साईं बाबा' 78
सूर्यनारायण रणसुभे : जो बलात्कार के दृश्य पर भी खुशी से सीटी बजाए... 97
श्रीधरम : जारकर्म के 'वास्कोडिगामा' 106
बजरंग बिहारी तिवारी : साखी सबदी गावत भूले 114
भागीरथ : शत्रु को नामजद किये बिना युद्ध कैसे लड़ सकते हैं? 120
ओमप्रकाश वाल्मीकि : ...के आलोचक का फासीवाद 127
डॉ. वीरेन्द्र सक्सेना : बेधर्मवीर और बेशर्मवीर बनने की दास्तान 130
हरीश मंगलम् : जारकर्मी दार्शनिकता का दस्तावेज 136
रमेश निर्मल : यह 'दलित' से 'हरिजन' हो जाना है 144

रामचन्द्र : तनी मुट्ठियाँ और प्रतिरोधी स्वर की अहमियत 151
राजकिशोर : दलित स्त्रियाँ किसकी संपत्ति हैं 157
अरुण माहेश्वरी : दलित चिंतन का वितंडावाद 162
सुनील कुमार 'सुमन' : पहले आत्मालोचन कर लें 166

कफन : तर्क या कुतर्क?

वेद प्रकाश : आप किधर हैं? 170
रणेन्द्र : कफन : हंगामा है क्यों बरपा? 177
द्वारिका प्रसाद चारूमित्र : अपनी मुक्ति के रास्ते अकेले में नहीं मिलते 180
जय कौशल : पाठ या कुपाठ 186
डॉ. कृष्णचन्द्र गुप्त : दलित विमर्श के भंवर में पड़ी 'कफन' कहानी का व्यंग्य, विद्रूप और विडम्बना 189

फोबिया-कथा

ओमराज : प्रेमचंद फोबिया और कफन-मीनिया की व्याधि 195
अरुण कुमार गौतम : तेरा क्या होगा कालिया! 201

परिचर्चा

चमन लाल : गाली-गलौज करना असभ्यता की निशानी है 209
कृष्ण कुमार 'आशु' : स्त्री की कोई जाति नहीं 212
सन्तोष खरे : जारसत्ता के महान खोजी 214
निर्मल मिलिंद : रघुवीर काठ की हांडी 218
खुदेजा खान : कि मिटे आपस का भेद 220

नंगा हो मत नाच!

रमणिका गुप्ता

छली, प्रपंची तू बड़ा, है कपटी मक्कार।
महायुद्ध के नाम पर अपनों से ही रार ॥
पावन 'बुधिया' चरित को, ठीक-ठीक तू जांच।
जारकर्म की आड़ में नंगा हो मत नाच ॥

(सूरजपाल चौहान)

इस पुस्तक में आलेखों के माध्यम से हम जो बात आपके सामने रखने जा रहे हैं, उस बात को सूरजपाल चौहान ने गागर में सागर भर कर इन दो छोटे दोहों की शक्ल में प्रस्तुत कर दिया है। बहरहाल सूरजपाल चौहान का मत तो स्पष्ट हो गया। राजेन्द्र यादव ने तो 'हंस' का पूरा एक संपादकीय ही डॉ. धर्मवीर के विचारों के खंडन में समर्पित किया था। इनके अतिरिक्त डॉ. अजय तिवारी, राजकिशोर, अरुण माहेश्वरी के विचार 'जनसत्ता' तथा 'राष्ट्रीय सहारा' आदि में, उन दिनों जब डॉ. धर्मवीर की पुस्तक आई और महिलाओं ने उसका विरोध किया प्रकाशित हुए थे, जिनमें उनकी दृष्टि स्पष्ट होती है। डॉ. तुलसीराम ने तो आज से कुछ बरस पहले ही डॉ. धर्मवीर के इन स्त्री विरोधी विचारों के खिलाफ एक लम्बा लेख लिखा था, जिसे इस पुस्तक के लिए उन्होंने भेजा। राजकिशोर और अरुण माहेश्वरी के प्रकाशित लेख हम इस पुस्तक में पुनः प्रकाशित कर रहे हैं।

यह तो हो गया हमारा आभार-खुशी या गुस्सा-गिला अथवा उलाहना, जिसका इजहार करना हमारा हक बनता है। आज तक लोग औरतों को 'फॉर ग्रांटेड' ही लेते रहे हैं, इसलिए अपने इस गुस्से के इज़हार से हम यह बता देना चाहते हैं कि अब और 'फॉर ग्रांटेड' नहीं चलेगा। गंभीर मुद्दों पर महिलाएँ स्वयं विचार-विमर्श और बहस करना जानती हैं और अनेक लेखक व चिंतक हैं, जो उनके साथ खड़े हैं, भले अपवाद-स्वरूप कुछ साथ न दें।

सच है कि सृष्टि का आरंभ ही जारकर्म से हुआ और सदियों क्या लाखों बरस बाद जब से सभ्यता का विकास होना शुरू हुआ, तब से आज तक जारकर्म

बदस्तूर जारी है। दरअसल जारकर्म मनुष्य और मनुष्य के बीच आपसी रिश्ते या सलूक की परिभाषा का एक आदिरूप या परफार्मा है (बशर्ते आप स्त्री को मनुष्य समझें)। जब तक स्त्री-पुरुष दोनों मनुष्य माने जाते रहे, जारकर्म एक स्वाभाविक प्रक्रिया मानी जाती रही। यह नर और मादा का स्वाभाविक रिश्ता माना जाता था। जब से नर पुरुष और मादा स्त्री बना दी गई, तब से जारकर्म का अर्थ बदल गया। पहले नर-मादा का यह रिश्ता सृष्टि-सृजन, सन्तति और प्रेम का स्वाभाविक प्रतीक था। बाद में जब नर-पुरुष ने मादा-स्त्री पर अपना कब्जा जमा लिया तब इस रिश्ते का अर्थ बदल गया और उसे व्यभिचार या बलात्कार का प्रतीक बना दिया गया। दुनिया भर में आज भी जारकर्म कई रूपों में मौजूद है कहीं सम्मानित तो कहीं अपमानित होकर। कई समाजों की आचारसंहिताओं में भी यह शामिल है। मनुष्य ही समाज का निर्माण करता है और उसके नियम भी वही बनाता है। जो नियम स्त्री-पुरुष दोनों की सहमति से बनते हैं, वे समानता, उदारता और सहयोग को प्रोत्साहित करते हैं। जहाँ पुरुष हावी हो जाता है, वहाँ स्त्री गुलाम होकर रहती है।

दरअसल सृष्टि की शुरुआत में जब मनुष्य जन्मा और उसमें सोचने की शक्ति आई, शायद सबसे पहले उसने जो सीखा होगा या कहें कि सीखा था वह विनाश और निर्माण की प्रक्रिया ही हो सकती है। बोलने की ताकत तो उसमें बहुत बाद में आयी। पहले वह इशारों में ही संवाद करता होगा। वैसे निर्माण और विनाश एक-दूसरे के पूरक होते हैं। कुछ नया गढ़ने के लिए कुछ पुराना तोड़ना ही पड़ता है। विनाश नये रूप के निर्माण के लिए स्थान और वातारण तैयार करता है। ये दोनों प्रक्रियाएँ साथ-साथ चलती हैं। जैसे ही कोई एक प्रक्रिया रुकती है, जड़ता आ जाती है। यह जड़ता वर्चस्ववादी रुझान को जन्म देती है। जो भी हो, इन दोनों प्रक्रियाओं में मनुष्य की अहम् भूमिका होती है। सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज तक राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक बदलावों का सूत्रधार मनुष्य ही रहा है। सारे धर्म, सारे ईश्वर, मनुष्य की देन हैं। जब मनुष्य-मनुष्य में, जिसमें स्त्री भी शामिल है प्रेम, स्नेह, सहयोग, सम्मान, आदर, कल्याण और भाईचारे की भावना व्याप्त होती है, तो वर्चस्व की भावना कमज़ोर पड़ जाती है और जैसे ही वर्चस्व की भावना सिर उठाती है, तो उपरोक्त सारी सद्भावनाएँ समाप्त हो जाती हैं। रह जाता है केवल वर्चस्व, कब्जा, स्वार्थ, जिसे लालच पुष्ट करता रहता है।

हालांकि स्त्री और पुरुष मानव समाज के दो पूरक अंग हैं। बावजूद इसके पुरुष ने स्त्री पर आधिपत्य जमाने के लिए अनेक कानून गढ़े, नियम बनाए, फतवे और संहिताएँ सिरजीं। उन्हें धर्म सम्मत बनाकर स्त्री को गुलाम बनाया।

ऐसे तो मनुष्य ने अपने से कमजोर पुरुषों को भी गुलाम या दास बनाया है लेकिन उनकी मुक्ति के रास्ते खुले थे।